तैयारी भावी नागरिकों की: जुड़ाव स्कूल के साथ समुदाय का

नज़रुल हक़ एवं सुजीत सिन्हा

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 2005 में कहा गया है कि "उर्वर एवं सुदृढ़ शिक्षा का सृजन सदैव बच्चे की भौतिक व सांस्कृतिक मिट्टी में होता है, उसी में उसकी जड़ें जमी होती हैं तथा उसका पोषण माता–पिता, शिक्षकों, सहपाठियों व समुदाय के साथ अन्तःक्रिया के माध्यम से होता है।" स्कूलों में समुदाय की भागीदारी के विभिन्न रूप हो सकते हैं। निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा, 2009 एक ऐसा कानून है जो 6–14 आयु वर्ग के सभी बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने की माँग करता है। इस अधिनियम में ही स्कूलों के लोकतन्त्रीकरण के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं और साथ ही इस बात के प्रावधान भी हैं कि स्कूल प्रबन्धन समितियों (SMC) के रूप में माता–पिता एवं स्थानीय समुदाय स्कूल को आकार देने व उसके संचालन में अपनी भूमिका निभाएँ और स्कूल विकास योजना तैयार करें। यह एक अच्छा कदम है और ऐसे जुड़ाव को तकनीकी हस्तक्षेपों के रूप में देखा जा सकता है जिसका उद्देश्य यह देखना है कि स्कूल प्रभावी ढंग से चलते रहें। हमारे बच्चे आज के (और आने वाले कल के) भी नागरिक हैं। समुदाय और स्कूल के बीच का सम्बन्ध जैविक और बच्चे व समुदाय के भविष्य से जुड़ा हुआ होना चाहिए। हमारे देश में ऐसे कुछ उदाहरण हैं जहाँ स्कूल–समुदाय का जुड़ाव सफल रहा है और जिनसे शिक्षा के अर्थ में भी योगदान मिला है। हम उनमें से तीन के बारे में चर्चा करेंगे: महाराष्ट्र का विज्ञान आश्रम का IBT मॉडल, आश्रम स्कूलों में शिक्षण–मित्र कार्यक्रम एवं पश्चिम बंगाल में स्वनिर्वर प्रयोग।

विज्ञान आश्रम मॉडल

वर्ष 1983 में महाराष्ट्र के पवल में डॉ. एस. कालबाग ने विज्ञान आश्रम की स्थापना की। डॉ. कालबाग ने देखा कि हमारे ज्ञान वितरण या शिक्षा प्रणाली में समाज के सभी वर्गों को समान रूप से ज्ञान नहीं मिलता। इसके कारण निर्धन लोग बौद्धिक कौशलों के सम्बन्ध में गम्भीर रूप से अक्षम रह जाते हैं। अतः वे आसपास उपलब्ध ज्ञान का उपयोग नहीं कर पाते। वे "ग्रामीण जनता की वास्तविक आवश्यकताओं" के लिए वैज्ञानिक व तकनीकी ज्ञान के प्रसार को लेकर अधिक चिन्तित थे और उन्होंने महसूस किया कि तकनीक के वितरण के लिए केवल शिक्षा प्रणाली ही प्रभावी तरीका है। इसलिए विज्ञान आश्रम की शुरुआत हुई जो अपने उद्देश्य "शिक्षा प्रणाली के माध्यम से ग्रामीण विकास" की दिशा में काम कर रहा है।

आन्तरिक अनौपचारिक कार्यक्रम के अलावा, डॉ. कालबाग ने स्कूल के विद्यार्थियों के लिए एक कोर्स Introduction to Basic Technology (IBT) डिजाइन किया है। यह कक्षा आठ से दस के विद्यार्थियों के लिए एक औपचारिक कोर्स है जो प्रवर्धनशील है। वर्तमान में यह चार राज्यों (महाराष्ट्र, कर्नाटक, छत्तीसगढ़ तथा गोवा) के 122 पब्लिक स्कूलों में चल रहा है। महाराष्ट्र सरकार ने कक्षा दसवीं की बोर्ड की परीक्षाओं के लिए IBT को एक विषय के रूप में मान्यता दी है। IBT काफी अभिनव पाठ्यक्रम है। इसमें चार उप विषय हैं: कृषि/पशु पालन; गृह/स्वास्थ्य; इंजीनियरिंग/मेटीरियल तथा ऊर्जा/पर्यावरण। लेकिन इस चर्चा में IBT के डिजाइन के सिद्धान्तों पर अधिक ध्यान दिया जाएगा तथा यह भी देखा जाएगा कि जैविक स्कूल–समुदाय जुड़ाव को प्राप्त करने के लिए इसकी रचना कैसे की गई।

बुनियादी मॉडल दो धारणाओं पर आधारित है–

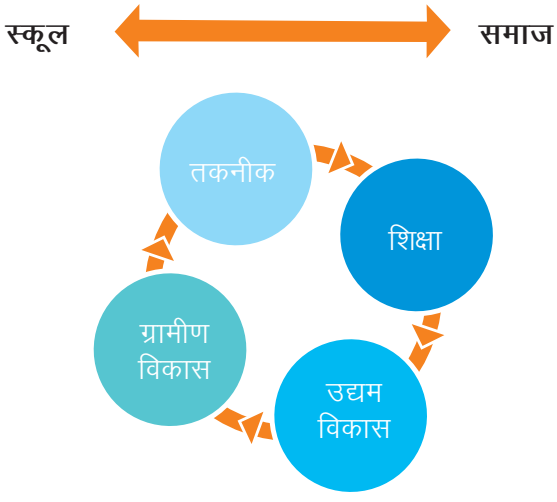

पूरे विज्ञान आश्रम शिक्षा मॉडल के चार सिद्धान्त हैं:

काम करते हुए सीखना

कक्षा में विद्यार्थी तब तक कुछ नहीं सीख सकते जब तक कि वे वास्तविक जीवन में अनुभवों की सहायता से पूर्वापेक्षित "अवधारणाओं" को सीख न लें। हर प्रकार की शिक्षा के लिए, खास करके विज्ञान की शिक्षा के लिए इस बात का बहुत महत्त्व है।

बहु कौशल प्रशिक्षण

कौशल हमारे विचारों और आविष्कारों को ठोस रूप देने का साधन हैं। कौशल–प्रशिक्षण विद्यार्थियों को दक्ष कारीगर बनाने के लिए नहीं है (वास्तव में विज्ञान आश्रम अपने को एक व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम के संचालक के रूप में नहीं देखता) लेकिन मन को ऊर्जा प्रदान करने के लिए विभिन्न प्रकार के कौशल आवश्यक हैं। इससे "तकनीकी साक्षरता" का सुगमीकरण होता है।

स्कूल और समुदाय के बीच दो तरफा जुड़ाव

स्कूल को समुदाय के लिए विभिन्न प्रकार की सेवाएँ मुहैया करानी चाहिए (सशुल्क सेवा) और ऐसा करते समय विद्यार्थी अपने ज्ञान से जुड़े व्यावहारिक एवं आर्थिक कौशल सीख सकते हैं (वास्तविक जीवन की स्थिति में)। समुदाय स्कूल के कामकाज में हिस्सेदार बन जाता है और इस प्रकार उसे आर्थिक रूप से स्थिर बना देता है।

एक उद्यमी के रूप में शिक्षक

विज्ञान आश्रम स्कूल में एक प्रशिक्षित "ड्रॉप आउट" को शिक्षक के रूप में नियुक्त करता है। वह स्कूल में उपलब्ध सुविधाओं के साथ अपना व्यवसाय चलाता है और विद्यार्थियों को प्रायोगिक प्रशिक्षण देता है। ऐसा करने से उसको अतिरिक्त आय हो जाती है, समुदाय को मामूली कीमत पर सेवा मिल जाती है और विद्यार्थियों को अच्छी शिक्षा मिल जाती है।

जब हम स्कूलों में समुदाय की भागीदारी के बारे में सोचते हैं तो अन्तिम दो कारक बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। यह तो मानी हुई बात है कि स्कूल एवं विद्यार्थी पृथक होकर काम नहीं कर रहे हैं बल्कि वे उस समुदाय का हिस्सा हैं जहाँ वे रहते हैं। इसके दो निहितार्थ हैं: **(अ)** बच्चे के भविष्य के निहितार्थ जब वह स्कूलिंग समाप्त करके अपने परिवार और समुदाय के पास वापस लौटेगा **(ब)** समुदाय के निहितार्थ क्योंकि महाराष्ट्र के अधिकतर स्कूल, जहाँ IBT कोर्स चल रहे हैं, काफी दूरदराज के क्षेत्रों में हैं तथा स्कूल वास्तव में बहुत सारी सेवाएँ गाँव वालों को प्रदान कर रहे हैं। इस प्रक्रिया में स्कूल कुछ पैसे कमाते हैं जो IBT कोर्स को चलाने में खर्च होते हैं। विद्यार्थी वास्तविक जीवन की समस्या को सुलझाने के तरीके सीखते हैं और आसपास के क्षेत्रों के निवासी भी लाभान्वित होते हैं। जैसा कि हमने पहले भी बताया है, IBT विशुद्ध रूप से विज्ञान और तकनीक पर आधारित कोर्स है और इस पहल के पीछे सामान्य विचार यह है कि ग्रामीण लोगों को ऐसी क्षमताओं से लैस किया जाए जिससे वे नए तकनीकी विकासों से होने वाले लाभों को काम में ला सकें। यह देखा गया है कि इन स्कूलों के माध्यम से अनेक नई तकनीकों को गाँव में लाया गया है (जो अन्यथा शायद सम्भव न होता)। इनमें से कुछ तकनीकों और सेवाओं का गाँव वालों की आजीविका और सेवाओं के साथ सीधा सम्बन्ध है–ये इस प्रकार हैं:

कृषि–पशुपालन

ड्रिप सिंचाई, छिड़काव यन्त्र, बीज बोना, अज़ोला कल्चर, कीट नियन्त्रण, मृदा परीक्षण आदि।

ऊर्जा / पर्यावरण

सौर कुकर, एल.ई.डी. प्रकाश व्यवस्था, बायो गैस, सोक पिट, वाटर शेड आदि।

खाद्य प्रसंस्करण

सौर शुष्कीकरण, जल परीक्षण आदि।

इंजीनियरिंग

फेरो सीमेंट, बाँस उपचार, कम लागत के आवास, शौचालय, पेडल पॉवर आदि।

शिक्षक को समुदाय का ही एक उद्यमी होना चाहिए! IBT के चार उप विषय हैं और कक्षा आठ से दस के बच्चों को पढ़ाने के लिए हर उप विषय के मॉड्यूल के लिए एक विशेषज्ञ शिक्षक चाहिए। उदाहरण के लिए: स्कूल को एक विशेषज्ञ किसान, विशेषज्ञ वेल्डर, विशेषज्ञ प्रयोगशाला व्यक्ति और बिजली व ऊर्जा में पर्याप्त कौशल रखने वाले व्यक्ति की जरूरत पड़ेगी। समुदाय में पहले से ही मौजूद चार उद्यमियों को काम पर लेने से दो निश्चित उद्देश्यों की पूर्ति होती है: समुदाय को लगता है कि वे भी स्कूल का हिस्सा हैं और दूसरे ये लोग विद्यार्थियों के लिए अनुकरणीय व्यक्ति बन जाते हैं क्योंकि विद्यार्थियों को लगता है कि उन्हें भी गाँव में ही रहकर अपने लिए सार्थक आजीविका खोजनी है या उसका सृजन करना है।

शिक्षण मित्र कार्यक्रम (SMP)

महाराष्ट्र के कुछ आश्रम स्कूलों में भारत एग्रो इंडस्ट्रीज फाउण्डेशन (BAIF) द्वारा SMP को शुरू किया गया। आश्रम स्कूल आदिवासी विद्यार्थियों के लिए आवासीय स्कूल हैं जिनकी अवधारणा नियमित सामान्य स्कूलों से अलग प्रकार की है। आश्रम स्कूलों की अवधारणा को बुनियादी शिक्षा के गाँधीवादी दर्शन से लिया गया है जिसमें शिक्षक और विद्यार्थी साथ–साथ रहते हैं तथा अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास और क्षमता को प्रखर करने में विद्यार्थियों की मदद की जाती है। विभिन्न नीतिगत दिशा निर्देशों ने जोर दिया है कि:

ये स्कूल सबसे पिछड़े आदिवासी क्षेत्रों में स्थापित किए जाएँगे;

ये अन्तर–ग्राम स्कूल होंगे;

इन्हें ऐसे क्षेत्रों में खोला जाएगा जहाँ सामान्य स्कूल नहीं खोले जा सकते।

महाराष्ट्र में ही, 1103 आश्रम स्कूलों में चार लाख आदिवासी विद्यार्थी नामांकित हुए हैं (556 – निजी सहायता प्राप्त एवं –576 सरकारी)

नन्दुरबार क्षेत्र के ग्रामीण और आदिवासी इलाके में काम करने के वर्षों बाद BAIF ने देखा कि अधिकांश आदिवासी विद्यार्थी स्कूल शिक्षा पूरी करने या बीच में ही छोड़ने के बाद अपनी परम्परागत कृषि–आधारित जीवन शैली को ही अपनाते हैं। अब चिन्ता यह थी कि क्या स्कूली जीवन के ये लम्बे वर्ष उन्हें ऐसे आवश्यक कौशलों से लैस करते हैं जिसकी उन्हें भावी जीवन में आवश्यकता है या फिर वे उन्हें जीवन की वास्तविक प्रक्रियाओं से दूर कर देते हैं! शिक्षण मित्र कार्यक्रम को इस तरह से तैयार किया गया था कि वह आश्रम शाला के विद्यार्थियों के समुदाय को प्रासंगिक मूल्य, व्यावहारिक ज्ञान तथा जीवन कौशल प्रदान कर सके। यह बात दृढ़ता के साथ महसूस की गई कि समुदाय के साथ पारस्परिक जुड़ाव शिक्षा प्रणाली का अभिन्न हिस्सा होना चाहिए। स्कूल ज्ञान के केन्द्र हैं और उन्हें चाहिए कि वे समुदाय को विद्यार्थियों की सहायता लेकर तो शिक्षित करें ही, साथ ही समुदाय के साथ सीधे अन्तःक्रिया करके भी शिक्षित करें। बदले में समुदाय को शारीरिक श्रम, सामग्री और वास्तविक जीवन की स्थितियों में अपने ज्ञान और कौशल को साझा करने के माध्यम से स्कूल के विकास में योगदान देना चाहिए।

दिलचस्प बात यह है कि BAIF का हस्तक्षेप इस विचार के साथ शुरू हुआ कि स्कूल अपने समुदाय के लिए "विकास केन्द्र" की तरह काम करेंगे। BAIF पहले से ही आदिवासियों के लिए विभिन्न आजीविका निर्माण/वृद्धि सम्बन्धी गतिविधियों पर काम कर रहा था। ये परियोजनाएँ अधिकतर समाकलित खेती, धान बढ़त प्रणाली, दुग्ध सहकारी, जैविक और परम्परागत खेती, फल–बागवानी, पुष्प कृषि, काजू की खेती आदि पर काम करती हैं। 2003 में उन्होंने यह फैसला किया कि आश्रम स्कूलों का उपयोग प्रदर्शन केन्द्र के रूप में किया जाए क्योंकि एक स्कूल में विभिन्न गाँवों के औसतन 400 बच्चे रहते हैं और वे छुट्टियों में अपने परिवार के पास वापस लौट जाते हैं। BAIF ने सोचा कि ये बच्चे छोटे पैमाने की ग्रामीण तकनीकों के बारे में अपने–अपने स्थानों में ज्यादा जागरूकता फैला सकते हैं। नन्दुरबार से आठ स्कूल चुने गए; BAIF के लोगों के साथ–साथ समुदाय के विशेषज्ञ किसान वहाँ प्रदर्शक के रूप में आए। 2009 में इस हस्तक्षेप को और अधिक औपचारिक रूप में नन्दुरबार जिले के 48 आश्रम स्कूलों में शुरू किया गया।

SMP का विशिष्ट लक्ष्य था आदिवासी विद्यार्थियों को जीवन कौशलों और जानकारियों से लैस करना। इन कौशलों और जानकारियों के कई आयाम हैं:

- कृषि और कृषि तकनीक सम्बन्धी कौशल व जानकारियाँ, स्वास्थ्य शिक्षा प्रदान करना और विद्यार्थियों को स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यक आदतों को आत्मसात करने में मदद करना;

- विद्यार्थियों की सामाजिक जागरूकता बढ़ाने के लिए उन्हें महत्त्वपूर्ण स्थानीय नागरिक संस्थानों के साथ–साथ आवश्यक सरकारी दस्तावेजों तथा नीतियों से परिचित कराना;
- उनके परिवेश की जैव विविधता के बारे में जागरूकता पैदा करना;
- महत्त्वपूर्ण जीवन कौशलों जैसे सम्प्रेषण कौशल, निर्णय लेने, समस्या सुलझाने, टीम कार्य, प्रबन्धन योजना के कौशलों के विकास आदि के लिए अवसर पैदा करना;
- आदिवासी विद्यार्थियों के आत्मविश्वास बढ़ाने और सकारात्मक छवि निर्माण के लिए अनुकूल माहौल बनाना।

आश्रम स्कूलों व समुदाय के बीच पूरकता की कोशिश इस प्रकार की गई:

- आदिवासी विद्यार्थियों के माध्यम से आसपास की आदिवासी बस्तियों में कृषि, स्वास्थ्य एवं सामाजिक विषयों में नवीनतम और उन्नत सूचना प्रसारण द्वारा;
- कुशल और जानकार गाँव वालों को संसाधक के रूप में स्कूल में आमन्त्रित करके उनके साथ सम्बन्ध स्थापित करना। इसके अलावा माता–पिता एवं गाँव वालों को सामग्री (उदाहरण के लिए बाड़े के लिए लकड़ी) या श्रम का दान करके स्कूल की गतिविधियों में योगदान करने के लिए कहा गया;
- एक–दूसरे के कार्यक्रम में भाग लेना–गाँव समुदाय स्कूल के व स्कूल समुदाय के कार्यक्रमों में हिस्सा ले।

शिक्षण मित्र कार्यक्रम के स्कूल–समुदाय जुड़ाव के विचार का एक महत्त्वपूर्ण कारक था "छुट्टी की परियोजनाएँ या प्रॉजेक्ट"। इसे विद्यार्थियों द्वारा समुदाय के लिए ज्ञान की उत्पत्ति एवं प्रसार के लिए एक उपकरण के रूप में बनाया गया था। दीवाली और गर्मियों की छुट्टियों में विद्यार्थी घर में ये प्रॉजेक्ट करते थे। इन प्रॉजेक्टों के चार मुख्य प्रकार थे:

- संग्रह सम्बन्धी प्रॉजेक्ट: बीज अथवा पारम्परिक गीतों का संग्रह;
- प्रदर्शन सम्बन्धी प्रॉजेक्ट: स्वास्थ्य (उदाहरण के लिए ORS घोल बनाना या जल शुद्धीकरण) अथवा कृषि (उदाहरण के लिए कृमि खाद) से सम्बन्धित प्रदर्शन;
- सर्वेक्षण सम्बन्धी प्रॉजेक्ट: विद्यार्थियों को ग्राम स्तर पर सामाजिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण मुद्दों का अध्ययन करना था, उसका गम्भीर विश्लेषण करना था, परिणाम निकालना था और समुदाय के साथ साझा करना था। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–गाँव के जल संसाधनों का सर्वेक्षण, गाँव के स्कूल छोड़कर जाने वाले विद्यार्थियों का सर्वेक्षण, जन्म व जाति प्रमाणपत्रों एवं राशन कार्डों आदि की उपलब्धता।
- फील्ड यात्रा: ज्यादातर ये यात्राएँ BAIF के सामुदायिक विकास की गतिविधियों का खुलासा करने के लिए थीं जैसे कि कृषि, प्रसंस्करण इकाइयों, जल एवं मृदा संरक्षण के स्थान, सहकारी समितियों में होने वाले नए–नए प्रयोग आदि।

SMP के उपायों को जून 2009 से मार्च 2009 तक यानी चार साल की अवधि में बहुत सक्रियता से लागू किया गया। "महाराष्ट्र, पुणे में कृषि नवीकरण के लिए क्रिया" ने परियोजना के प्रभाव का आकलन किया और अप्रैल, 2013 में इसकी रिपोर्ट दी। रिपोर्ट के अनुसार इस परियोजना के सभी हितधारकों यानी विद्यार्थियों, शिक्षकों तथा समुदायों को इसकी वजह से बेहतर कृषि, जीवन कौशल, खेतों में उसके अनुप्रयोग, जैविक खाद का प्रयोग करके फसल उगाने आदि के बारे में जानकारी प्राप्त हो रही है और इस प्रकार उन्हें सीधे ही लाभ पहुँच रहा है। इस कारण से विद्यार्थियों की रुचि कृषि में पुनः जाग्रत हो रही है और उन्हें इस बात का विश्वास हुआ है कि कृषि भी आजीविका के स्थायी स्रोतों में से एक हो सकती है। फूलों की खेती, किचन गार्डन, कृमि खाद, फल–बागवानी, वृक्षारोपण तथा नर्सरी तकनीक आदि के बारे में जो कौशल विद्यार्थी प्राप्त करते हैं, उसे वे अपने माता–पिता व पूरे परिवार तक पहुँचाते हैं। ये महत्त्वपूर्ण मुद्दे हैं क्योंकि कोई भी समुदाय इस बात से लाभान्वित और समृद्ध होगा कि जब उसके अधिक से अधिक शिक्षित युवा गाँव में ही रहकर आजीविका बढ़ाने के बेहतर और उत्पादक उपाय शुरू करें।

प्रभाव का आकलन एक और महत्त्वपूर्ण क्षेत्र की बात कर सकता है: स्कूल में लड़कियों की भागीदारी। रिपोर्ट ने पता लगाया कि समुदाय की लड़कियों ने लड़कों के साथ घुलना–मिलना शुरू कर दिया है और जीवन कौशल सम्बन्धी सभी गतिविधियों में बराबरी के तौर पर भाग लेना शुरू कर दिया है। वे नौकरी करना चाहती हैं और छोटी उम्र में शादी करना नहीं चाहतीं। वे अपने स्वास्थ्य एवं स्वच्छता सम्बन्धी मुद्दों पर अजनबियों के साथ बात करने में आत्मविश्वासी हैं। यह तर्क दिया जा सकता है कि ये स्कूल अपने समुदायों के संवर्धन में बड़े प्रभावी ढंग से

योगदान दे रहे हैं क्योंकि यह बात सर्वविदित है कि शिक्षित और सशक्त लड़कियाँ पूरे समुदाय को बदल सकती हैं भले ही ये योगदान प्रत्यक्ष और दृष्टिगोचर न हों।

स्वनिर्वर प्रयोग

1990 के दशक में पश्चिम बंगाल के 24 परगना जिले में काम कर रहे गैर सरकारी संगठन स्वनिर्वर ने एक सवाल पूछा था–क्या गरीब अनपढ़ समुदाय "ज्ञान उत्पादन और प्रसारण" में भाग ले सकता है? या स्कूली शिक्षा का मतलब सिर्फ यही है कि शिक्षक "ज्ञान" को पाठ्यपुस्तकों से निकालकर बच्चों के गले के नीचे उतार दें? और समुदाय द्वारा स्कूल की गतिविधियों में "भाग" लेने की सीमा बस इतनी ही है कि शायद वे कभी–कभी श्रम, सामग्री और अगर सम्भव हो तो धन के रूप में कुछ योगदान कर देते हैं एवं शिक्षकों से स्वास्थ्य और स्वच्छता पर नैतिक व्याख्यान सुन लेते हैं।

उन दिनों कक्षा तीन से इतिहास, भूगोल और विज्ञान के लिए अलग–अलग पुस्तकें हुआ करती थीं। यह बात पर्यावरण अध्ययन या EVS से पहले के जमाने की है। कक्षा तीन से पाँच के 17 अध्याय मानव इतिहास को पूरी तरह से "समझा" देते थे। भूगोल तो बस पश्चिम बंगाल के हर जिले तथा भारत के हर राज्य की जानकारियों का एक ढेर था जिसके साथ–साथ नक्शे भी याद करने पड़ते थे। बेचारे गरीब अनपढ़ माता–पिता आतंकित होने के सिवा और कर भी क्या सकते थे?

स्वनिर्वर ने इस प्रभाव को पलटकर समुदाय को वास्तविक भागीदार बनाने का निश्चय किया। कक्षा तीन और चार के बच्चों से पहले अपने स्वयं का व्यक्तिगत इतिहास या समय रेखा बनाने को कहा गया। कुछ तो उन्हें याद था। लेकिन बाकी का उन्हें पता लगाना था। लेकिन किससे? उनके बचपन के शुरुआती दिनों के बारे में किसे पता होगा? क्या पाठ्यपुस्तकों में उनका इतिहास होगा? क्या शिक्षकों को पता होगा? ये अनपढ़ माता–पिता ही तो थे जो अपने बच्चों को उनके प्रारम्भिक जीवन की घटनाओं के बारे में बता सकते थे। अगली बात थी अपनी पिछली तीन–चार–पाँच पीढ़ियों का इतिहास लिखना–नाम, पेशा, सालों में आए परिवर्तन, देश परिवर्तन आदि। फिर घर में मौजूद सबसे पुरानी वस्तु की जाँच आरम्भ हुई। एक बार फिर बेचारे अनपढ़ माता–पिता का "ज्ञान" फूटकर बाहर निकला और बच्चों ने उसे लिखा। इस तरह से समुदाय का ज्ञान कक्षा में आ पहुँचा और चर्चा का, सोच–विचार का और अगर सम्भव हुआ तो किसी पैटर्न को देखने का विषय बन गया। जब बच्चों से पूछा गया कि उनके गाँव का नाम कैसे पड़ा तो पूरा समुदाय इसकी खोज में शामिल हो गया। कई भिन्न विवरण मिले और समुदाय बड़े उत्साह से बहस व तर्क–वितर्क में लग गया। और बच्चों ने विभिन्न विवरण लिखे।

इसके बारे में कैसे पता लगाया जाए?

इसका सबूत क्या है?

गाँव में मिट्टी के कितने प्रकार हैं?

कौन सी फसल कहाँ होती है और क्यों?

हर फसल की आवश्यकताएँ क्या हैं?

गाँव के विभिन्न शिल्प और अन्य व्यवसाय क्या हैं?

हमें यह सब कौन बता सकता है?

गाँव के किसान, गाँव के कारीगर?

क्या उन्हें कक्षा में लाया जा सकता है या बच्चों को उनके पास ले जाया जाए?

क्या बच्चे पहले आपस में चर्चा करके प्रश्नावली तैयार कर लें?

क्या हम सब मिलकर गाँव का नक्शा बना सकते हैं?

भूगोल के विषय में अब पूरा समुदाय शामिल हो गया था और वह रटने वाला एक उबाऊ विषय नहीं रह गया था। स्वनिर्वर को लगा कि यह बात स्कूल–समुदाय के जुड़ाव को एक और ही आयाम दे रही थी जिसमें स्कूल स्तरीय शिक्षण–अधिगम पूरे समुदाय में चल रहा था और सभी इसके साथ जुड़ रहे थे। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 मानती है कि यह जुड़ाव शिक्षा सम्बन्धी कार्यों (जिसमें सभी सम्बद्ध लोगों को ज्ञान, कौशल और मूल्य प्रदान करना आ जाता है) को आगे ले जाने का वैध तरीका है।

निष्कर्ष

अभी बहुत सारा काम करना बाकी है। ऊपर उल्लिखित तीनों प्रयत्न समुद्र में बूँद के समान हैं। भारत के 99 प्रतिशत से अधिक स्कूलों में आज भी स्कूली शिक्षा को पाठ्यपुस्तकों के साधन के माध्यम से विद्यार्थियों व समुदाय पर शिक्षकों के आधिपत्य के रूप में देखा जाता है। लेखकों को पक्के तौर पर यह पता नहीं है कि अधिकांश शिक्षकों की मूलभूत प्रवृत्ति में बदलाव लाने के लिए किस प्रकार की क्षमता या वातावरण के निर्माण की जरूरत पड़ेगी। मौजूदा माहौल में अगर NCF 2005

शिक्षकों को दिया जाए तो उसका प्रयोग अमल में लाने के बजाए याद किए जाने वाले पाठ के रूप में किया जाएगा। जब नवीं कक्षा की एक लड़की पर यह ताना कसा गया कि क्या सर्वेक्षण करने के लिए स्वनिर्वर उसे पैसे दे रहा है तो उसने पंचायत के सदस्य को चुनौती दी कि गाँव की समस्याओं के बारे में उस सदस्य के और उसके स्वयं के ज्ञान की शुद्धता की परीक्षा ली जाए; और साफ शब्दों में यह भी कहा कि भविष्य में वह उस सदस्य से बेहतर पंचायत सदस्या बनेगी!! हमारे पास ऐसी स्कूल समुदाय जैविक प्रणाली कब होगी जो अधिकांश विद्यार्थियों को ऐसा साहस व ज्ञान–कौशल–मूल्य दे सके?

सुजीत सिन्हा वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में संकाय–सदस्य हैं। उन्होंने पश्चिम बंगाल के ग्रामीण विकास गैर सरकारी संगठन (स्वनिर्वर) में 20 से अधिक वर्षों तक काम किया है। यह संगठन शिक्षा, स्वास्थ्य, टिकाऊ कृषि, स्वयं सहायता समूह और आदर्श पंचायतों के निर्माण कार्य से जुड़ा हुआ था। सुजीत की प्राथमिक रुचि है–गाँधी और टैगोर के शिक्षा सम्बन्धी विचारों को पुनः व्याख्यायित करके उन्हें आज और भविष्य के लिए प्रासंगिक बनाना। उनसे sujit.sinha@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

नज़रुल हक़ कई वर्षों तक कई और काम करने के बाद हाल ही में विकास–क्षेत्र के साथ जुड़े हैं और सम्प्रति वे अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की "कार्य एवं शिक्षा" पहल के साथ काम कर रहे हैं। उनकी रुचि इस बात में है कि विकास पर एक वैकल्पिक चिन्तन करें और यह देखें कि स्कूल इस प्रकार की सोच में कैसे योगदान कर सकते हैं। उनसे nazrul.haque@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवादः** नलिनी रावल